ISSN: 2249-894X Impact Factor :3.8014(UIF) Volume - 6 | Issue - 1 | October - 2016

Review Of Research

लॉर्ड वेलेज़ली की सहायक सन्धि प्रणाली — ब्रिटिश साम्राज्यवाद का एक घातक हथियार: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. दिलीप कुमार
सहायक आचार्य — इतिहास, महामाया राजकीय महाविद्यालय, श्रावस्ती (उ.प्र.)

1. सार

1797 ईस्वी में जिस समय लॉर्ड वेलेजली गवर्नर जनरल के रूप में अपने उत्तरदायित्व को संभालने के लिए भारत रवाना हुआ उसे समय इंग्लैंड के लिए यूरोप और भारत दोनों जगह पर अनेक कठिनाइयां थीं। ईस्ट इंडिया कंपनी अभी तक भारत में प्रथम श्रेणी की शक्ति नहीं बन पाई थी। मराठा संघ में आंतरिक संघर्ष होते हुए भी उसके कई सदस्य अभी भी शक्तिशाली और प्रभावशाली थे। मैसूर का टीपू सुल्तान अंग्रेजों का कट्टर शत्रु था और उसने स्वयं को न केवल नागरिक टीपू कहा बल्कि फ्रांसीसी क्रांतिकारियों की तिरंगे झंडे को अपने यहां फहराया, यहां तक की जिस समय वेलेजली लेने कलकत्ता में कदम रखा उसी समय मॉरीशस टापू से लगभग 2000 फ्रांसीसी सैनिकों ने बंगलौर में प्रवेश किया। क्रांतिकारी फ्रांस नेपोलियन का नेतृत्व पाकर यूरोप में पुनः शक्तिशाली बन गया और इंग्लैंड के लिए भयंकर खतरा उत्पन्न कर दिया। फिर भी वेलेजली ने अपने साथ वर्ष के शासनकाल में अपने समस्त विरोधियों को धूल चटाकर कर कंपनी को भारत की सर्वश्रेष्ठ शक्ति बना दिया और इस हेतु उसका जो सबसे बड़ा घातक हथियार था, वह था सहायक संधि प्रणाली। लॉर्ड वेलेज़ली (1798–1805) द्वारा प्रवर्तित सहायक सन्धि प्रणाली उन सबमें सर्वाधिक सुनियोजित, घातक और दूरगामी परिणामों वाली थी। इस प्रणाली ने बिना प्रत्यक्ष युद्ध के भारतीय राज्यों को ब्रिटिश प्रभुत्व के अधीन करने का एक अत्यन्त चतुर मार्ग प्रशस्त किया। प्रस्तुत शोधपत्र में सहायक सन्धि प्रणाली की उत्पत्ति, उसके प्रमुख प्रावधान, विभिन्न राज्यों पर उसके प्रभाव, उसकी घातक प्रकृति और भारतीय इतिहास पर उसके दीर्घकालिक परिणामों का विवेचनात्मक विश्लेषण किया गया है। यह भी परखा गया है कि किस प्रकार इस प्रणाली ने भारतीय राज्यों की स्वायत्तता को धीरे-धीरे खोखला करते हुए उन्हें ब्रिटिश साम्राज्य के अधीनस्थ इकाइयों में

परिणत कर दिया। निष्कर्ष यह है कि सहायक सन्धि प्रणाली साम्राज्यवादी विस्तार का वह परिष्कृत हथियार थी जो बाहर से सुरक्षा का वचन देती थी और भीतर से सम्प्रभुता का हरण करती थी।

2. शब्द कुंजी

वेलेज़ली, सहायक सन्धि, ब्रिटिश साम्राज्यवाद, ईस्ट इण्डिया कम्पनी, भारतीय रियासतें, अधीनस्थ पृथक्करण, निज़ाम, मराठा, मैसूर, अवध, राष्ट्रीय आंदोलन, उपनिवेशवाद।

3. प्रस्तावना

वेलेजली के आगमन के समय भारत की राजनीतिक परिस्थितियों अंग्रेजों के लिए बेहद संवेदनशील थी। फ्रांसीसी पुनः अंग्रेजों को भारत से निकलने के लिए प्रयत्नशील हो गए। नेपोलियन 1801 ईस्वी में रूस से मिलकर कांधार और हेरात के रास्ते से भारत पर आक्रमण की जो योजना बना रहा था, वह वास्तव में अंग्रेजों के लिए बेहद संकट का समय था। भारत के अनेक दरबारों में फ्रांसीसी सैनिक व अधिकारी कार्यरत थे। सिंधियाने भी अपनी सेना का गठन फ्रांसीसियों की सहायता से किया था, फिर भी विलेजली ने कंपनी की शक्ति एवं प्रतिष्ठा की स्थापना के लिए प्रारंभ से ही शक्ति का प्रयोग और भारतीय राजनीति में सक्रिय भागीदारी अपना लक्ष्य बना लिया था।अपने इसी लक्ष्य की पूर्ति हेतु वेलेजली ने सहायक संधि प्रणाली को एक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया, जो भारतीय राजनीति एवं नरेशों के लिए घातक सिद्ध हुआ।

भारत के इतिहास में अनेक ऐसे मोड़ आए जहाँ किसी एक नीति या निर्णय ने सम्पूर्ण उपमहाद्वीप की राजनीतिक नियति को बदल दिया। लॉर्ड वेलेज़ली की सहायक सन्धि प्रणाली ऐसा ही एक ऐतिहासिक मोड़ थी। 1798 में जब वेलेज़ली भारत के गवर्नर जनरल के पद पर आया, तब ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी बंगाल, बम्बई और मद्रास तक सीमित थी। जब वह 1805 में स्वदेश लौटा, तब वह एक ऐसी प्रणाली छोड़ गया जिसने भारत के अधिकांश भाग को ब्रिटिश प्रभाव के घेरे में समेट लिया था।

सहायक सन्धि प्रणाली की विशेषता यह थी कि इसने साम्राज्यवादी विस्तार के परम्परागत तरीके — सैनिक विजय और प्रत्यक्ष प्रशासनिक अधिग्रहण — के स्थान पर एक अधिक सूक्ष्म और घातक मार्ग अपनाया। इस प्रणाली में देशी राज्यों को स्वतन्त्र रहने का भ्रम दिया जाता था, किन्तु वास्तव में उनकी समस्त निर्णय-शक्ति धीरे-धीरे ब्रिटिश रेजिडेण्ट के हाथों में चली जाती थी [1]।

इतिहासकार पर्सिवल स्पियर के अनुसार सहायक सन्धि प्रणाली वेलेज़ली की वह राजनीतिक प्रतिभा थी जिसने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को उसका सबसे प्रभावशाली उपकरण दिया। प्रस्तुत शोधपत्र इसी उपकरण के विभिन्न आयामों और उसके भारतीय प्रभावों का विश्लेषणात्मक परीक्षण करता है।

4. सहायक सन्धि प्रणाली की पृष्ठभूमि एवं उत्पत्ति

सहायक सन्धि प्रणाली को समझने के लिए उस परिप्रेक्ष्य को जानना अनिवार्य है जिसमें वेलेज़ली भारत आया था। अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में भारत की राजनीतिक स्थिति अत्यन्त जटिल थी। मुगल साम्राज्य का पतन हो चुका था और उसके स्थान पर मराठा, सिख, हैदराबाद का निज़ाम, मैसूर और अवध जैसी शक्तियाँ उभरी थीं।

वेलेज़ली एक दृढ़ साम्राज्यवादी विचारधारा के व्यक्ति थे। उनका स्पष्ट मानना था कि भारत में ब्रिटिश सत्ता को सर्वोच्च बनाना इंग्लैण्ड का राष्ट्रीय हित है। वे यह भी जानते थे कि प्रत्येक राज्य के साथ युद्ध कर उसे जीतना न केवल महँगा है, बल्कि राजनीतिक दृष्टि से भी जोखिमभरा है। अतः उन्होंने एक ऐसी नीति की आवश्यकता अनुभव की जो बिना प्रत्यक्ष युद्ध के भारतीय राज्यों को ब्रिटिश छत्रछाया में ला सके [2]।

वेलेज़ली ने सहायक सन्धि को उचित ठहराने के लिए फ्रांसीसी खतरे का उपयोग किया। नेपोलियन के मिस्र अभियान (1798) के पश्चात् यह आशंका उत्पन्न हुई कि फ्रांस भारत पर आक्रमण कर सकता है। वेलेज़ली ने तर्क दिया कि भारतीय राज्य फ्रांसीसी प्रभाव के शिकार हो सकते हैं — इसलिए उनकी 'रक्षा' के लिए ब्रिटिश सैनिकों की तैनाती आवश्यक है। यह तर्क वास्तव में एक चतुर राजनीतिक आवरण था जिसके नीचे साम्राज्यवादी विस्तार का असली लक्ष्य छिपा था।

यह भी उल्लेखनीय है कि सहायक सन्धि का मूल विचार वेलेज़ली के दिमाग की उपज नहीं था। फ्रांसीसी गवर्नर जनरल डूप्ले ने सर्वप्रथम इसी प्रकार की नीति अपनाई थी। भारतीय राजाओं के आन्तरिक संघर्षों में हस्तक्षेप कर उन्हें सैनिक सहायता के बदले उनसे राजनीतिक सुविधाएँ और क्षेत्र प्राप्त करना। वेलेज़ली ने इस विचार को और अधिक व्यवस्थित और घातक रूप दिया [3]। विलेजली ने इसमें नवीन शर्तों को जोड़कर इसे कंपनी के साम्राज्य विस्तार का एक घातक हथियार बना दिया और प्रत्येक भारतीय नरेशों के साथ इसका प्रयोग किया।

5. सहायक सन्धि के प्रमुख प्रावधान एवं शर्तें

वेलेजली से पूर्व कंपनी द्वारा किए गए सहायक संधि के अंतर्गत निम्न तीन प्रावधान दिखाई पड़ते हैं-

1-भारतीय नरेशों को आवश्यकता पड़ने पर उन्हें कंपनी द्वारा सैनिक सहायता दी जाती थी और बदले में उनसे निश्चित धनराशि प्राप्त की जाती थी।

2-कंपनी से संधि करने वाले भारतीय नरेशों की सुरक्षा हेतु उनकी सीमा के निकट, किंतु कंपनी की सीमा में स्थाई सेना रखी जाती थी जिसके बदले में उनसे वार्षिक धन प्राप्त किया जाता था।

3-इस शर्त के अंतर्गत संधि करने वाले भारतीय नरेशों की सीमा के भीतर सेना रखी जाती थी और बदले में उनसे निश्चित वार्षिक धन ली जाती थी।

4-संधि में इस शर्त को वेलेजली ने जोड़ा था जो उसका सबसे महत्वपूर्ण योगदान था, इसके अंतर्गत संधि करने वाले भारतीय नरेश के राज्य की सुरक्षा हेतु न केवल एक स्थाई सेना उसकी सीमा के भीतर रखी जाती थी, बल्कि उसके बदले निश्चित वार्षिक धन के स्थान पर राज्य की भूमिका कुछ हिस्सा सदा के लिए कंपनी ले लेती थी।

सहायक सन्धि प्रणाली अपनी बाहरी संरचना में एक पारस्परिक रक्षा-समझौते जैसी दिखती थी, किन्तु उसके वास्तविक प्रावधानों का विश्लेषण करने पर उसका एकपक्षीय और शोषणकारी चरित्र स्पष्ट हो जाता है।

ब्रिटिश सैनिक दस्ते की तैनाती

सन्धि के अन्तर्गत देशी राज्य को अपने राज्य में एक निश्चित संख्या में ब्रिटिश सैनिकों की एक टुकड़ी स्वीकार करनी होती थी। यह टुकड़ी कम्पनी की देखरेख में रहती थी और उस पर देशी शासक का कोई नियन्त्रण नहीं होता था। इस व्यवस्था की आड़ में वास्तव में एक विदेशी सैनिक शक्ति देशी राज्य के भीतर स्थापित हो जाती थी [4]।

सैनिक व्यय का बोझ

इस सैनिक टुकड़ी का समस्त व्यय देशी राज्य को वहन करना होता था। यह व्यय प्रायः राज्य की आय का एक बड़ा हिस्सा होता था। यदि राज्य नकद में भुगतान करने में असमर्थ हो, तो उसे अपना कुछ भू-भाग कम्पनी को सौंपना पड़ता था। इस प्रकार सन्धि की शर्तें स्वयं ही देशी राज्य के क्षेत्रीय संकुचन का मार्ग प्रशस्त करती थीं।

स्वतन्त्र विदेश नीति पर प्रतिबन्ध

सहायक सन्धि का सबसे घातक प्रावधान यह था कि देशी राज्य अन्य किसी शक्ति के साथ — चाहे वह अन्य भारतीय राज्य हो या विदेशी सत्ता — स्वतन्त्र रूप से कोई सन्धि या वार्ता नहीं कर सकता था। सभी कूटनीतिक सम्बन्ध ब्रिटिश रेजिडेण्ट के माध्यम से होने थे। इस प्रावधान ने भारतीय राज्यों की सम्प्रभुता का सबसे महत्त्वपूर्ण आयाम — विदेश नीति — पूर्णतः छीन लिया [5]।

ब्रिटिश रेजिडेण्ट की भूमिका

प्रत्येक सहायक राज्य में एक ब्रिटिश रेजिडेण्ट नियुक्त किया जाता था जो वास्तव में उस राज्य का वास्तविक शासक बन जाता था। वह राज्य की आन्तरिक नीतियों में हस्तक्षेप करता था, शासक को सलाह — जो वास्तव में आदेश होती थी — देता था और राज्य के समस्त महत्त्वपूर्ण निर्णयों पर अपनी स्वीकृति की मुहर लगाता था।

ब्रिटिश संरक्षण का वचन

बदले में कम्पनी यह वचन देती थी कि वह देशी राज्य को बाहरी आक्रमण और आन्तरिक विद्रोह से सुरक्षा प्रदान करेगी। यह वचन देखने में आकर्षक लगता था, किन्तु इसका व्यावहारिक अर्थ यह था कि कम्पनी को 'सुरक्षा' के नाम पर देशी राज्य के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप का स्थायी अधिकार मिल जाता था।

6. सहायक सन्धि का विस्तार — विभिन्न राज्यों से सन्धियाँ

वेलेज़ली ने अपने सात वर्षों के कार्यकाल में सहायक सन्धि को भारत के विभिन्न भागों में लागू करते हुए ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र का अभूतपूर्व विस्तार किया। इस प्रक्रिया में प्रत्येक राज्य के साथ अलग परिस्थितियाँ थीं, किन्तु परिणाम सभी के लिए एक ही था — ब्रिटिश वर्चस्व की स्थापना।

हैदराबाद का निज़ाम (1798)

सहायक सन्धि स्वीकार करने वाला पहला राज्य हैदराबाद था। सितम्बर 1798 में निज़ाम ने इस सन्धि पर हस्ताक्षर किए। निज़ाम उस समय मराठों के दबाव में था और उसे बाहरी संरक्षण की आवश्यकता थी। वेलेज़ली ने इस कमजोरी का कुशलतापूर्वक लाभ उठाया। निज़ाम को छह पैदल बटालियनें स्वीकार करनी पड़ीं जिनका व्यय उसे भूमि के रूप में चुकाना पड़ा। इस प्रकार हैदराबाद ब्रिटिश कक्षा में आ गया [6]।

मैसूर (1799)

टीपू सुल्तान की पराजय और मृत्यु (1799) के पश्चात् मैसूर का शासन पुराने हिन्दू राजवंश को लौटाया गया। किन्तु यह लौटाना बिना शर्त नहीं था — मैसूर को भी सहायक सन्धि स्वीकार करनी पड़ी। इस प्रकार टीपू जो शक्ति लेकर नहीं झुका, उसे हराने के बाद वेलेज़ली ने उसी भूमि को सहायक सन्धि के जाल में फँसा लिया।

तंजावुर, सूरत और कर्नाटक

1799 और 1800 के मध्य तंजावुर, सूरत और कर्नाटक के नवाबों के साथ भी इसी प्रकार की व्यवस्थाएँ की गईं। इन छोटे राज्यों के शासकों के पास न तो इन्कार करने की शक्ति थी, न ही कोई वास्तविक विकल्प।

मराठा राज्य — पेशवा, सिन्धिया और भोंसले (1802–03)

1802 में पेशवा बाजीराव द्वितीय ने होल्कर के दबाव से घबराकर बसीन की सन्धि के अन्तर्गत सहायक सन्धि स्वीकार की। यह मराठा संघ के लिए एक ऐतिहासिक पराजय थी। 1803 के द्वितीय आंग्ल-मराठा युद्ध में सिन्धिया और भोंसले को भी पराजित कर सहायक सन्धि में बाँध दिया गया। इस प्रकार मराठा शक्ति — जो मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् भारत की सबसे बड़ी शक्ति थी — को ब्रिटिश वर्चस्व के अधीन कर लिया गया [7]।

अवध (1801)

अवध के नवाब सआदत अली खाँ को 1801 में सहायक सन्धि स्वीकार करने के लिए विवश किया गया। अवध को अपने राज्य का आधा भाग — रोहिलखण्ड और गोरखपुर — कम्पनी को सौंपना पड़ा। यह क्षेत्र अत्यन्त उपजाऊ और राजस्व की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था। अवध व्यावहारिक रूप से एक संरक्षित राज्य बन गया।

7. सहायक सन्धि की घातक प्रकृति — एक विश्लेषण

सहायक सन्धि को 'घातक हथियार' की संज्ञा देने के पीछे ठोस ऐतिहासिक आधार है। इस प्रणाली की घातकता उसके कई परस्पर सम्बद्ध आयामों में निहित थी।

आर्थिक पंगुता

सैनिक व्यय का बोझ अन्ततः देशी राज्यों को आर्थिक दृष्टि से खोखला कर देता था। एक बड़े सैनिक दस्ते का भरण-पोषण राज्य के राजकोष पर भारी दबाव डालता था। इस दबाव से राहत पाने के लिए राज्य को या तो भूमि सौंपनी पड़ती थी या अतिरिक्त कर लगाने पड़ते थे — दोनों ही स्थितियों में जनता की कठिनाइयाँ बढ़ती थीं और राज्य की शक्ति घटती थी [8]।

सैनिक असहायता

सहायक सन्धि के अन्तर्गत देशी राज्य की अपनी सेना को या तो विसर्जित करना होता था या उसे बहुत सीमित रखना होता था। इसका तात्पर्य यह था कि यदि भविष्य में राज्य को कम्पनी से ही खतरा हो जाए, तो उसके पास आत्मरक्षा के लिए कोई साधन नहीं बचता था। यह ठीक उसी प्रकार था जैसे किसी को उसके घर में ही निःशस्त्र कर दिया जाए।

कूटनीतिक अलगाव

स्वतन्त्र विदेश नीति पर प्रतिबन्ध ने देशी राज्यों को एक-दूसरे से कूटनीतिक रूप से अलग कर दिया। वे न तो आपस में सहयोग कर सकते थे, न ही किसी तीसरी शक्ति से सहायता माँग सकते थे। इस 'विभाजन की नीति' ने भारतीय राज्यों की सामूहिक प्रतिरोध-क्षमता को नष्ट कर दिया और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के समक्ष उन्हें एकाकी और असहाय बना दिया।

क्रमिक अधिग्रहण का मार्ग

सहायक सन्धि एक स्थायी व्यवस्था नहीं थी — यह एक सीढ़ी थी। जैसे-जैसे देशी राज्य सैनिक व्यय चुकाने में अक्षम होते गए, वैसे-वैसे वे अपनी भूमि सौंपते गए। जब भूमि इतनी कम हो गई कि राज्य शासन योग्य न रहे, तो 'कुशासन' का आरोप लगाकर सम्पूर्ण राज्य को हड़प लिया जाता था। इस प्रकार सहायक सन्धि और व्यपगत सिद्धान्त मिलकर एक सम्पूर्ण साम्राज्यवादी तन्त्र बनाते थे [9]।

मनोवैज्ञानिक प्रभाव

सहायक सन्धि का एक कम चर्चित किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रभाव मनोवैज्ञानिक था। जब देशी शासक अपने ही दरबार में एक विदेशी रेजिडेण्ट की उपस्थिति को स्वीकार कर लेता था, तो उसका मनोबल टूट जाता था। वह निर्णय लेने में संकोच करने लगता था, अपनी प्रजा में उसकी प्रतिष्ठा घटती थी और धीरे-धीरे वह शासन में रुचि खोने लगता था।

8. सहायक सन्धि का भारतीय जनजीवन पर प्रभाव

सहायक सन्धि के प्रभाव राजमहलों तक सीमित नहीं थे — इसके परिणाम भारतीय समाज के प्रत्येक स्तर तक पहुँचे और दीर्घकालिक रूप से भारतीय जनजीवन को प्रभावित किया।

स्थानीय उद्योग और व्यापार पर प्रभाव

जब देशी राज्यों के दरबार उजड़े, तो उनसे जुड़े हस्तशिल्पी, व्यापारी, संगीतकार, कवि और अन्य कलाकारों की आजीविका भी समाप्त हो गई। दरबारी संस्कृति का पतन केवल राजनीतिक परिवर्तन नहीं था — यह एक सांस्कृतिक और आर्थिक विनाश भी था। शहरी अर्थव्यवस्था के एक बड़े हिस्से को गहरा आघात पहुँचा।

किसानों और भूमि पर प्रभाव

जब देशी राज्य भूमि कम्पनी को सौंपते थे, तो उस भूमि पर नई ब्रिटिश भूराजस्व व्यवस्था लागू हो जाती थी। यह व्यवस्था प्रायः पारम्परिक व्यवस्था से अधिक कठोर और यान्त्रिक थी। किसानों के परम्परागत अधिकार और जमींदारों की पुश्तैनी व्यवस्थाएँ बाधित हो जाती थीं जिससे ग्रामीण असन्तोष बढ़ता था [10]।

सामाजिक अस्थिरता

देशी राज्यों की सेनाओं के विसर्जन से हजारों प्रशिक्षित सैनिक बेरोजगार हो गए। ये निराश और असन्तुष्ट सैनिक कभी-कभी डकैती और अराजकता का मार्ग अपना लेते थे। इससे समाज में एक व्यापक असुरक्षा और अस्थिरता का वातावरण उत्पन्न हुआ जो ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विरुद्ध बाद के प्रतिरोधों की आधारशिला बनी।

9. सहायक सन्धि की सीमाएँ एवं आलोचनाएँ

सहायक सन्धि प्रणाली पूर्णतः निर्विवाद नहीं थी स्वयं ब्रिटिश पक्ष में भी इसके आलोचक थे और भारतीय पक्ष में प्रतिरोध भी हुआ।

कम्पनी के निदेशकों का विरोध

ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के लन्दन-स्थित निदेशक मण्डल ने वेलेज़ली की विस्तारवादी नीतियों की आलोचना की। उनका तर्क था कि यह अत्यधिक विस्तार कम्पनी के व्यापारिक हितों के लिए हानिकारक है और अनावश्यक सैनिक व्यय बढ़ाता है। वास्तव में कंपनी के निदेशकों की यह आशंका निराधार नहीं थी। बिजली के युद्धों के कारणइसी कारण कंपनी की आर्थिक स्थिति अत्यंत खराब हो गई तथा उसे पर कर्ज हो गया। अतः ऐसी स्थिति में निरंतर युद्ध जारी रखना असंभव था और उसका परिणाम भी हानिकारक हो सकता था। इसीलिए निर्देशक कौन है1805 में वेलेज़ली को वापस बुलाकर लॉर्ड कॉर्नवालिस को 67 वर्ष की आयु में पुनः भारत भेजा गया।

भारतीय प्रतिरोध

कुछ भारतीय शासकों ने सहायक सन्धि को स्वीकार करने से इन्कार किया या उसके विरुद्ध संघर्ष किया। मराठा संघ में होल्कर और सिन्धिया जैसे नेताओं ने ब्रिटिश वर्चस्व के विरुद्ध लड़ाई लड़ी। मैसूर में टीपू सुल्तान ने तो प्राण दे दिए किन्तु किसी भी अपमानजनक सन्धि को स्वीकार नहीं किया। यह प्रतिरोध इस बात का प्रमाण है कि सहायक सन्धि सर्वसम्मत नहीं थी। कुछ भारतीय शासको का इस प्रणाली का विरोध करने का जो मुख्य कारण प्रतीत होता है की इस संधि की शर्त कि राज्यों में अंग्रेज रेजिडेंट नियुक्त किए जाएंगे जो राज्य की आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे किंतु अंग्रेजों ने इस शर्त का कभी पल नहीं किया और रेजिडेंट सदैव दरबार में न केवल नरेशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करते थे बल्कि उनके विरुद्ध षड्यंत्र भी करते थे।

सहायक सन्धि ने तात्कालिक रूप से ब्रिटिश नियन्त्रण स्थापित किया, किन्तु दीर्घकाल में यह 1857 के महाविद्रोह जैसी हिंसक प्रतिक्रियाओं की पृष्ठभूमि भी तैयार करती रही। जो असन्तोष इसने भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों में उत्पन्न किया, वह एकत्रित होता रहा और एक दिन विस्फोट के रूप में सामने आया।

10. इतिहासकारों के दृष्टिकोण: एक समीक्षात्मक विवेचन

सहायक सन्धि प्रणाली के मूल्यांकन को लेकर इतिहासकारों में परस्पर भिन्न और कभी-कभी सीधे विरोधाभासी मत प्रस्तुत किए गए हैं। इनका विवेचन हमें इस प्रणाली की बहुआयामी प्रकृति को समझने में सहायता करता है।

साम्राज्यवादी इतिहासकारों का दृष्टिकोण

जेम्स मिल और मैल्कम जैसे ब्रिटिश इतिहासकारों ने सहायक सन्धि को भारत के 'सभ्यीकरण' और 'अच्छे शासन' की दिशा में एक आवश्यक कदम के रूप में प्रस्तुत किया। उनका तर्क था कि इस प्रणाली ने भारत के अनेक क्षेत्रों में शान्ति और व्यवस्था स्थापित की जो अराजकता और युद्ध में डूबे हुए थे। यह दृष्टिकोण वेलेज़ली की नीति को उचित ठहराने का प्रयास था।

राष्ट्रवादी इतिहासकारों का मत

आर.सी. माजूमदार, के.एम. पणिक्कर और अन्य राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने सहायक सन्धि को एक सुनियोजित साम्राज्यवादी षड्यन्त्र के रूप में परिभाषित किया। पणिक्कर ने इसे 'अधीनस्थ पृथक्करण की नीति' कहा और तर्क दिया कि इसने भारतीय राज्यों को एक-दूसरे से काटकर ब्रिटिश शोषण का शिकार बनाया। इस दृष्टिकोण में वेलेज़ली एक साम्राज्यवादी विस्तारक के रूप में सामने आता है।

आधुनिक विद्वानों का सन्तुलित मूल्यांकन

पर्सिवल स्पियर, बर्टन स्टीन और अन्य आधुनिक इतिहासकार एक अधिक सन्तुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। वे स्वीकार करते हैं कि सहायक सन्धि एक घातक साम्राज्यवादी उपकरण थी, किन्तु साथ ही यह भी रेखांकित करते हैं कि यह कोई अप्रत्याशित प्रणाली नहीं थी — यह उसी उपनिवेशवादी विश्व-व्यवस्था का हिस्सा थी जो उस काल में यूरोपीय शक्तियों की वैश्विक रणनीति का केन्द्र थी। इन विद्वानों का मानना है कि इस प्रणाली को उसके ऐतिहासिक संदर्भ में समझना आवश्यक है।

उत्तर-औपनिवेशिक दृष्टिकोण

रणजीत गुहा और सुबाल्टर्न स्टडीज़ समूह के विद्वानों ने सहायक सन्धि के उन पक्षों पर ध्यान केन्द्रित किया जो प्रायः उपेक्षित रहे — अर्थात् इस प्रणाली का सामान्य जनता और हाशिए के समुदायों पर क्या प्रभाव पड़ा। इस दृष्टिकोण ने इतिहास-लेखन को एक नई गहराई और विस्तार प्रदान किया।

11. निष्कर्ष

लॉर्ड वेलेज़ली की सहायक सन्धि प्रणाली भारतीय इतिहास का वह अध्याय है जो साम्राज्यवाद की चतुराई और उसकी क्रूरता — दोनों को एक साथ उजागर करता है। यह प्रणाली इसलिए घातक थी क्योंकि यह बाहर से एक लाभकारी रक्षा-समझौते जैसी दिखती थी और भीतर से वह धीरे-धीरे देशी राज्यों की सम्प्रभुता, आर्थिक शक्ति, सैनिक क्षमता और कूटनीतिक स्वायत्तता को खोखला करती जाती थी।

इस प्रणाली की सबसे बड़ी सफलता यह थी कि इससे भारतीय नरेशों की शक्ति पूर्णता समाप्त हो गई और वे अंग्रेजों के हाथ की कठपुतली बन गए। इसने भारतीय राज्यों को एक-दूसरे से अलग कर दिया और प्रत्येक को यह विश्वास दिलाया कि उसकी सुरक्षा केवल कम्पनी के साथ रहने में है। इस मनोवैज्ञानिक जाल ने भारतीय राज्यों की सामूहिक प्रतिरोध-क्षमता को नष्ट कर दिया। हैदराबाद, मैसूर, मराठा और अवध — सभी एक-एक कर इस जाल में आते गए।

वेलेज़ली की सहायक सन्धि प्रणाली से भारत से फ्रांसीसियों का प्रभाव पूर्णता समाप्त हो गया क्योंकि संधि का यह शर्त संधि करने वाला भारतीय राज्य अपनी विदेश नीति को अंग्रेजों के हाथ में सौंप देगा और बिना अंग्रेजों की अनुमति के वह

किसी भी यूरोपियन को अपनी सेवा में नहीं रखेगा। वास्तव में वेलेजली कि इस बुद्धिमत्ता ने उस समय जबकि यूरोप के सभी राष्ट्र नेपोलियन के सम्मुख रेत की दीवार की भांति ढह रहे थे, वेलेजली की सहायक संधि ने भारत में फ्रांसीसियों की कमर तोड़ दी ।आज का सबसे महत्त्वपूर्ण पाठ यह है कि साम्राज्यवाद सदैव तोप के मुँह से नहीं आता वह कभी-कभी सुरक्षा के वचन और मित्रता के अनुबन्ध के रूप में भी आता है। जो राष्ट्र या समाज अपनी आर्थिक और सैनिक निर्भरता को किसी बाहरी शक्ति पर छोड़ देता है, वह कालान्तर में अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रता भी खो देता है। इतिहास का यह सत्य वेलेज़ली की सहायक सन्धि ने अत्यन्त कटु रूप से प्रमाणित किया।

अन्त में, सहायक सन्धि प्रणाली को केवल एक नीति के रूप में नहीं, बल्कि उस व्यापक मानसिकता के प्रतीक के रूप में देखा जाना चाहिए जो दूसरों की कमजोरी को अपने विस्तार का अवसर मानती है। भारतीय इतिहास में इस प्रणाली का अध्ययन इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि यह हमें यह समझने में सहायता करता है कि उपनिवेशवाद ने भारत को किस प्रकार और कितनी परतों में अपने अधीन किया और उन परतों को उघाड़े बिना स्वाधीनता का पूरा अर्थ नहीं समझा जा सकता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

[1] स्पियर, पर्सिवल — The Oxford History of Modern India, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1978।

[2] माजूमदार, आर.सी., राय चौधरी, एच.सी. एवं दत्त, के. — An Advanced History of India, मैकमिलन इण्डिया, नई दिल्ली, 1978।

[3] पणिक्कर, के.एम. — Asia and Western Dominance, जॉर्ज एलन एण्ड अनविन, लन्दन, 1953।

[4] चन्द्र, बिपिन — India's Struggle for Independence, पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली, 1989।

[5] सरकार, सुमित — Modern India 1885–1947, मैकमिलन इण्डिया, नई दिल्ली, 1983।

[6] थॉर्न्टन, एडवर्ड — History of the British Empire in India, Vol. III, W.H. Allen & Co., लन्दन, 1842।

[7] वेलेज़ली, रिचर्ड — The Despatches, Minutes and Correspondence of the Marquess Wellesley, Vol. I–V, जॉन मर्रे, लन्दन, 1836।

[8] मिल, जेम्स — The History of British India, Vol. V, जेम्स मेडेन, लन्दन, 1826।

[9] स्टीन, बर्टन — A History of India, ब्लैकवेल पब्लिशर्स, ऑक्सफोर्ड, 1998।

[10] पाण्डेय, बी.एन. — The Break-up of British India, मैकमिलन, लन्दन, 1969।